



2026:AHC: 65483

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

आपराधिक पुनरीक्षण संख्या - 2854/2025

अजय कुमार सिंह

.....पुनरीक्षणवादी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और 3 अन्य

.....विपक्षी(गण)

पुनरीक्षणवादी(गण) के अधिवक्ता

: डॉ. राजेश कुमार श्रीवास्तव

विपक्षी(गण) के अधिवक्ता

: शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या- 53

माननीय न्यायमूर्ति अब्दुल शाहिद

- पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए विद्वान ए.जी.ए. को सुना गया।
- वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण पुनरीक्षणकर्ता द्वारा विशेष मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, मेरठ द्वारा आपराधिक वाद संख्या 8550 वर्ष 2020 (राज्य बनाम सुरेंद्र सिंह और अन्य), जो मुकदमा अपराध संख्या 347 वर्ष 2017, धारा 417, 465, 468, 471 और 120बी भा.द.सं. (भारतीय दंड संहिता), पुलिस स्टेशन सदर बाजार, जिला मेरठ से उत्पन्न हुआ है, में पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 20.7.2024, जिसके द्वारा पुनरीक्षणकर्ता के आरोपमुक्त करने के प्रार्थना पत्र को खारिज कर दिया गया है, से व्यथित होकर दाखिल किया गया है।
- वाद के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि विपक्षी संख्या 4/प्रथम सूचनादाता द्वारा पुलिस स्टेशन सदर बाजार, जिला मेरठ में धारा 417, 465, 468, 471 और 120बी भा.द.सं. के अंतर्गत एक एफ.आई.आर. दर्ज कराई गई थी। उक्त एफ.आई.आर. में, पुनरीक्षणकर्ता को नामित नहीं किया गया था और उसका नाम पहली बार विवेचना के दौरान सह-अभियुक्त के बयान में सामने आया था और, उसके बाद, पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध आरोप-पत्र भी दाखिल किया गया था।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



4. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट, जो सी.बी.सी.आई.डी. द्वारा की गई एक विस्तृत प्रारंभिक जांच पर आधारित है, के परिशीलन से, जांच अधिकारी के साथ-साथ विपक्षी संख्या 4 द्वारा यह बहुत स्पष्ट कर दिया गया है कि वर्तमान मामले में कौन से अधिकारी शामिल थे, प्रथम सूचना रिपोर्ट में न तो पुनरीक्षणकर्ता के नाम का उल्लेख है और न ही उस पर कोई प्रत्यक्ष कृत्य या लोप आरोपित किया गया है। पुनरीक्षणकर्ता प्रासंगिक समय पर वरिष्ठ सहायक के पद पर तैनात था और उसके द्वारा प्रश्नागत पद के सृजन के लिए कोई सिफारिश नहीं की गई थी और न ही उसके द्वारा कोई दस्तावेज प्रस्तुत किया गया था तथा वह मामले में पूरी तरह से निर्दोष था।

5. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि सी.बी.सी.आई.डी. द्वारा की गई विस्तृत प्रारंभिक जांच के दौरान, वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता की संलिप्तता के संबंध में कोई संदेह भी नहीं उठाया गया है, इसके बावजूद विद्वान विचारण न्यायालय पुनरीक्षणकर्ता को आरोपमुक्त करने में विफल रहा है। पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया है कि पुनरीक्षणकर्ता और अन्य नामित सह-अभियुक्तों के बीच अपराधों की दोषिता की सीमा तक कोई निकटता प्रकट नहीं हुई है क्योंकि एफ.आई.आर. में अभियुक्तों की सूची में उसके नाम का उल्लेख नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि की गई प्रारंभिक जांच के दौरान यह पुष्टि की गई है कि पुनरीक्षणकर्ता वर्तमान मामले में अन्य सह-अभियुक्त से किसी भी तरह से संबंधित नहीं था।

6. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने पुरजोर तर्क दिया है कि पुनरीक्षणकर्ता के अभियोजन के लिए स्वीकृति प्राधिकारी की ओर से मस्तिष्क का पूर्ण अप्रयोग हुआ है क्योंकि वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता की संलिप्तता साबित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है और साक्ष्य इतना कमजोर और भंगुर है कि यह तर्क की कसौटी पर खरा नहीं उतर सकता। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि अभियोजन के लिए स्वीकृति प्राधिकारी यह मूल्यांकन करने में विफल रहा है कि पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध कुछ भी आरोप नहीं लगाया गया है और समझदारी से यह साक्ष्य की ऐसी श्रृंखला नहीं बनाता है जो इतनी पूर्ण हो कि अचूक रूप से पुनरीक्षणकर्ता के अपराध की ओर इशारा करे।

7. पुनरीक्षणकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि उन्हीं आरोपों के लिए, जिनके लिए पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध आपराधिक विचारण जारी है, उसे अनुशासनिक कार्यवाहियों के अधीन किया गया था और उक्त अनुशासनिक कार्यवाहियों को इस कारण से छोड़

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



दिया गया है कि पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध मामले में उसकी कथित संलिप्तता के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं मिला। पुनरीक्षणकर्ता को उसके विरुद्ध शुरू की गई अनुशासनिक कार्यवाहियों में दोषमुक्त कर दिया गया है।

8. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया है कि यह विधि का सुस्थापित प्रस्ताव है कि यदि आरोपों के एक ही समूह के लिए, अनुशासनिक कार्यवाहियां की गई हैं और अभियुक्त को निर्दोष पाया गया है, तो उन्हीं आरोपों के लिए, आपराधिक विचारण को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती क्योंकि आपराधिक विचारण में आरोपों को साबित करने के लिए, प्रमाण का मानक अनुशासनिक कार्यवाहियों में आवश्यक प्रमाण के मानक की तुलना में बहुत ऊंचे स्तर पर होता है क्योंकि अनुशासनिक कार्यवाहियों में आरोप संभावनाओं की प्रबलता पर साबित किए जाते हैं।

9. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया है कि पुनरीक्षणकर्ता को उक्त अपराध में झूठा फंसाया गया है। प्रथम सूचना रिपोर्ट में उसका नाम नहीं था। पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया है कि पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध अनुशासनिक जांच शुरू की गई थी, जिसमें अनुशासनिक प्राधिकारी ने पुनरीक्षणकर्ता की कोई भूमिका नहीं पाई और इसलिए, पुनरीक्षणकर्ता को उस पर लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया।

10. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया है कि पुनरीक्षणकर्ता पर लगाए गए आरोपों को एक अन्य व्यक्ति द्वारा स्वीकार किया गया है, जिसके विरुद्ध विचारण चल रहा है। पुनरीक्षणकर्ता अपने विरुद्ध किसी भी सामग्री के बिना विचारण का सामना करने का हकदार नहीं है जो कि अवैध है। इसलिए, वह आरोपमुक्त किए जाने का हकदार है।

11. राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान ए.जी.ए. ने पुनरीक्षण का विरोध किया है और तर्क दिया है कि आक्षेपित आदेश विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा सही ढंग से पारित किया गया है और, इसलिए, पुनरीक्षण खारिज किए जाने योग्य है।

12. तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा 'संजय कुमार राय बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य; 2022 (5) एस.सी.सी. 720' में सर्वोच्च न्यायालय (माननीय सूर्य कांत, न्यायमूर्ति द्वारा लिखित) ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



"12. सबसे पहले, हम यह नोट कर सकते हैं कि उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार के अभाव के आधार पर आपराधिक पुनरीक्षण को खारिज कर दिया है। उच्च न्यायालय ने यह पता लगाने के लिए मुद्दे का विस्तार से परीक्षण नहीं किया कि क्या इस मामले में कार्यवाहियों को जारी रखना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। आक्षेपित आदेश एशियन रिसर्फेसिंग (उपरोक्त) में इस न्यायालय के निर्णय का हवाला देता है जिसमें निम्नानुसार नोट किया गया था:

"इस प्रकार, हम यह घोषित करते हैं कि आरोप विरचित करने वाला आदेश विशुद्ध रूप से एक अंतर्वर्ती आदेश नहीं है और न ही एक अंतिम आदेश है। उच्च न्यायालय की क्षेत्राधिकार किसी याचिका के लेबल की परवाह किए बिना वर्जित नहीं है, चाहे वह धारा 397 या 482 दंड प्रक्रिया संहिता या संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत हो। हालांकि, उक्त क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधायी नीति के अनुरूप किया जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि किसी भी तरह से बाधित हुए बिना विचारण का शीघ्र निस्तारण हो सके। इस प्रकार विचार करने पर, आरोप के आदेश को दी गई चुनौती को विरल से विरल मामले में ही क्षेत्राधिकार की पेटेंट त्रुटि को सुधारने के लिए विचार किया जाना चाहिए न कि मामले का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए।"

13. हमें ऐसा प्रतीत होता है कि आपराधिक पुनरीक्षण के दायरे को केवल क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटियों तक सीमित करते हुए, उच्च न्यायालय ने एशियन रिसर्फेसिंग (उपरोक्त) में निर्णय को स्पष्ट रूप से कम करके आंका हम कम से कम दो कारणों से ऐसा कहते हैं। पहला, उपर्युक्त मामले में तात्त्विक तथ्य भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अंतर्गत विरचित आरोपों की चुनौती से संबंधित थे। उद्धृत निर्णय स्वयं स्पष्ट करता है कि न केवल पोका एक विशेष विधान है, बल्कि इसमें पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के नियमित प्रयोग के विरुद्ध धारा 19 के अंतर्गत एक विशिष्ट रोक भी शामिल है। दूसरा, इस न्यायालय ने एशियन रिसर्फेसिंग (उपरोक्त) में हमारी आपराधिक कानून प्रणाली में अनियंत्रित लंबन और देरी से निपटने की आवश्यकता के संबंध में चिंता व्यक्त करते हुए, मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य में एक पूर्व निर्णय में निर्धारित सिद्धांत का पालन किया, जैसा कि निम्नलिखित उद्धरण से देखा जा सकता है: "27. इस प्रकार, यद्यपि विभिन्न स्थितियों से निपटते समय, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि आरोप विरचित करने वाला आदेश अंतर्वर्ती आदेश था और धारा 397(2) या यहां तक कि धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत हस्तक्षेप

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



के योग्य नहीं था, प्रतीत होने वाले परस्पर विरोधी प्रेक्षण किए गए हो सकते हैं, मधु लिमये [मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1977) 4 एस.सी.सी. 551: 1978 एस.सी.सी. (क्रिमिनल) 10] में निर्धारित सिद्धांत अभी भी मान्य है। आरोप विरचित करने वाले आदेश को विशुद्ध रूप से एक अंतर्वर्ती आदेश नहीं माना जा सकता है और दी गई स्थिति में धारा 397(2) दंड प्रक्रिया संहिता या 482 दंड प्रक्रिया संहिता या संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत, जो कि एक संवैधानिक प्रावधान है, हस्तक्षेप किया जा सकता है, लेकिन आरोप विरचित करने वाले आदेश में हस्तक्षेप करने और स्थगन प्रदान करने की उच्च न्यायालय की शक्ति का प्रयोग केवल एक असाधारण स्थिति में ही किया जाना है।"

14. मधु लिमये (उपरोक्त) में, इस न्यायालय ने प्रामाणिक रूप से अभिनिर्धारित किया: "9. कभी-कभी उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का भी उसी प्रकार के अनुतोष के लिए संज्ञान लेने या आदेशिकाएं जारी करने या आरोप विरचित करने वाले आदेश को इस आधार पर चुनौती देकर सहारा लिया गया है कि न्यायालय को संज्ञान लेने और विचारण के साथ आगे बढ़ने की कोई क्षेत्राधिकार नहीं थी, कि आदेशिका जारी करना पूरी तरह से अवैध या शून्य था, या कोई आरोप नहीं विरचित किया जा सकता क्योंकि लगाए गए आरोपों या न्यायालय में प्रस्तुत साक्ष्य पर कोई अपराध नहीं बनता है.. 10. यहां तक कि यह मानते हुए भी, यद्यपि हम वर्तमान में दिखाएंगे कि ऐसा नहीं है, कि ऐसे मामले में न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने या आदेशिकाएं जारी करने का आदेश एक अंतर्वर्ती आदेश है, क्या यह कहना तर्कसंगत है कि अभियुक्त को अंत तक प्रताड़ित करने के बजाय आपराधिक कार्यवाही को जल्द से जल्द रोकने के लिए उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है? इसका उत्तर स्पष्ट है कि यह रोक न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और/या न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए काम नहीं करेगी। व्यथित पक्षकार द्वारा दाखिल याचिका का लेबल महत्वहीन है।" 15. मधु लिमये (उपरोक्त) में निर्धारित विधि की सही स्थिति, इस प्रकार यह है कि आरोप विरचित करने वाले या आरोपमुक्त करने से इनकार करने वाले आदेश प्रकृति में न तो अंतर्वर्ती हैं और न ही अंतिम हैं और इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 (2) की रोक से प्रभावित नहीं हैं। इसके अलावा, इस न्यायालय ने उपर्युक्त मामलों में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि उच्च न्यायालय प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या व्यक्तिगत मामलों के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए न्याय के उद्देश्यों

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



को सुरक्षित करने के लिए अंतर्निहित क्षेत्राधिकार से संपन्न है। एक चेतावनी के रूप में यह कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय को, अपनी पूर्वोक्त क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय सतर्क रहना चाहिए। आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रभावी और समयबद्ध प्रशासन के लिए उच्च न्यायालय में निहित विवेक का प्रयोग सावधानीपूर्वक और विवेकपूर्ण तरीके से किया जाना है। फिर भी, यह न्यायालय पूर्णतः अलग रहने के दृष्टिकोण की सिफारिश नहीं करता है। यद्यपि, असाधारण मामलों में हस्तक्षेप होना चाहिए, ऐसा न होने पर किसी नागरिक के अधिकारों पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना है। उदाहरण के लिए, जब किसी परिवाद की अंतर्वस्तु या अभिलेख पर मौजूद अन्य कथित सामग्री किसी निर्दोष व्यक्ति को प्रताड़ित करने का एक निर्लज्ज प्रयास हो, तो न्यायालय के लिए विधि की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकना अनिवार्य हो जाता है। 16. इसके अतिरिक्त, यह सुस्थापित है कि विचारण न्यायालय को आरोपमुक्ति प्रार्थना पत्र पर विचार करते समय केवल एक डाकघर के रूप में कार्य नहीं करना है। न्यायालय को यह पता लगाने के लिए साक्ष्य की छानबीन करनी होगी कि क्या संदिग्ध का विचारण करने के लिए पर्याप्त आधार हैं। न्यायालय को व्यापक संभावनाओं, प्रस्तुत साक्ष्य और दस्तावेजों के कुल प्रभाव और मामले में दिखाई देने वाली बुनियादी कमजोरियों आदि पर विचार करना होगा। [भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार सामल]। इसी तरह, यदि आवश्यक हो, तो न्यायालय के पास उपयुक्त मामलों में आगे के अन्वेषण का आदेश देने का पर्याप्त विवेक है। यह भी अभिनिर्धारित किया जाता है कि आरोपमुक्ति अभियुक्त को प्रदान किया गया एक मूल्यवान अधिकार है।"

13. 'उर्मिला देवी और अन्य बनाम बलराम और एक अन्य; 2025 एस.सी.सी. ऑनलाइन 1574' में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय की कार्यवाही को उत्पीड़न या प्रताड़ना के हथियार के रूप में पतित होने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

14. यह स्थापित विधिक स्थिति है कि उपर्युक्त न्यायिक निर्णयों के आधार पर और साक्ष्य अधिनियम की धारा 25, 26 और 30 के वैधानिक प्रावधानों के दृष्टिगत कि किसी सह-अभियुक्त की संस्वीकृति साक्ष्य का एक वैध हिस्सा नहीं है जिसका उपयोग किसी आपराधिक विचारण में अभियुक्त के विरुद्ध किया जा सके। किसी पुलिस अधिकारी के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति के समक्ष की गई अतिरिक्त-न्यायिक संस्वीकृति की स्थिति अलग क्षेत्र रखेगी। किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष की गई संस्वीकृति की स्थिति भी वैसी ही है और इसे किसी सह-अभियुक्त के विरुद्ध

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



विचार में भी लिया जा सकता है, लेकिन वर्तमान मामले में, पुनरीक्षणकर्ता का नाम सह-अभियुक्त के बयान में आया है और अभियोजन पक्ष द्वारा पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध कोई अन्य साक्ष्य इंगित नहीं किया जा सका। इसलिए, वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता पर लगाए गए आरोप से आरोपमुक्त होने का मामला बनता है और पुनरीक्षणकर्ता आरोप से आरोपमुक्त किए जाने का हकदार है।

15. सर्वोच्च न्यायालय ने 'राधे श्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य; (2011) 3 एस.सी.सी. 581' के प्रस्तर संख्या 22 में अभिनिर्धारित किया कि बॉम्बे उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश को 'हेमेंद्र एम. कोठारी बनाम प्रवर्तन निदेशालय (फेरा)', निर्णीत 25.04.2007 में विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम के अंतर्गत एक मामले में इस प्रश्न पर विचार करने का अवसर मिला और इस न्यायालय तथा अन्य न्यायालयों के बड़ी संख्या में निर्णयों की समीक्षा पर यह निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुंचा :-

"21. यह ध्यान दिया जा सकता है कि वर्तमान मामले में आवेदक को न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों में प्रवर्तन के उप निदेशक, जो न्यायनिर्णयन प्राधिकारी थे, द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था। स्वीकार्य रूप से उस आदेश को प्रत्यर्थी द्वारा अपील में चुनौती नहीं दी गई थी और इस प्रकार वह आदेश अंतिम हो गया है। मैंने पहले ही न्यायनिर्णयन प्राधिकारी के तथ्यों और निष्कर्षों को विस्तार से नोट कर लिया है। न्यायनिर्णयन प्राधिकारी स्पष्ट रूप से इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि वर्तमान आवेदक को फेरा के प्रावधानों के उल्लंघन के लिए दोषी ठहराने के लिए कोई सामग्री नहीं थी और उसे पूरी तरह से दोषमुक्त कर दिया गया था। जब न्यायनिर्णयन प्राधिकारी के समक्ष विभागीय कार्यवाहियों में, विभाग आरोपों को स्थापित नहीं कर सका, तो यह कल्पना करना कठिन है कि विभाग आपराधिक न्यायालय के समक्ष उन्हीं आरोपों को कैसे साबित कर सकता है जब प्रमाण का मानक विभागीय कार्यवाहियों में आवश्यक प्रमाण के मानक की तुलना में बहुत अधिक और कठोर हो सकता है।"

16. दिल्ली उच्च न्यायालय ने भी 'सुनील गुलाटी और एक अन्य बनाम आर.के. वोहरा (2007) 145 डी.एल.टी. 612' के वाद में विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम के अंतर्गत एक मामले से उत्पन्न होने वाले इस प्रश्न पर विस्तार से विचार किया, और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :-

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



"25. 4. विपरीत स्थिति के मामले में अर्थात् जहां अभियुक्त व्यक्तियों को न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों में सक्षम प्राधिकारियों/न्यायाधिकरण द्वारा दोषमुक्त कर दिया जाता है, तो यह निर्धारित करने के लिए कि क्या ये आपराधिक कार्यवाहियां अभी भी जारी रहनी चाहिए, इस तरह के दोषमुक्ति के कारणों को देखना होगा। यदि विभागीय न्यायनिर्णयन में दोषमुक्ति तकनीकी आधार पर या संदेह का लाभ देकर है और गुण-दोष के आधार पर नहीं है या न्यायनिर्णयन कार्यवाहियां अलग-अलग तथ्यों पर थीं, तो इसका आपराधिक कार्यवाहियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। यदि, दूसरी ओर, न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों में दोषमुक्ति गुण-दोष के आधार पर है और संबंधित व्यक्ति निर्दोष है/हैं, और आपराधिक अभियोजन भी तथ्यों और परिस्थितियों के एक ही समूह पर है, तो आपराधिक अभियोजन को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। कारण स्पष्ट है आपराधिक परिवाद विभागीय प्राधिकारियों द्वारा अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से अधिनियम के प्रावधानों के उल्लंघन का आरोप लगाते हुए दाखिल किया जाता है। हालांकि, यदि विभागीय प्राधिकारी स्वयं, न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों में, एक स्पष्ट और असंदिग्ध निष्कर्ष दर्ज करते हैं कि अधिनियम के प्रावधानों का ऐसा कोई उल्लंघन नहीं है, तो ऐसे विभागीय प्राधिकारियों के लिए आपराधिक परिवाद के साथ जारी रहना और यह कहना अनुचित होगा कि अभियुक्त व्यक्तियों पर आपराधिक दायित्व थोपने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है जब विभागीय कार्यवाहियों में यह कहा गया है कि प्रथम दृष्टया ऐसा कोई उल्लंघन नहीं है। इसलिए, मापदंड यह देखने के लिए होगा कि क्या विभागीय कार्यवाहियों के साथ-साथ आपराधिक परिवाद में आरोप समान हैं और विभागीय कार्यवाहियों में संबंधित व्यक्ति की दोषमुक्ति यह अभिनिर्धारित करते हुए गुण-दोष के आधार पर है कि किसी भी अधिनियम के प्रावधानों का कोई उल्लंघन नहीं है।"

17. उक्त मामले में, सक्षम प्राधिकारी द्वारा एक जांच की गई, जिसने अपनी रिपोर्ट दिनांक 13.10.2020 प्रस्तुत की। उक्त रिपोर्ट इस पुनरीक्षण के **अनुलग्नक-2** के रूप में संलग्न है। जांच रिपोर्ट के प्रस्तर 6 की अंतिम पंक्ति में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यह स्पष्ट रूप से स्थापित हो गया है कि अधिष्ठान अनुभाग-2 के प्रेषण रजिस्टर में क्रम संख्या 3503 के समक्ष की गई कटिंग न तो डिस्पैचर, सुश्री मंजू श्रीवास्तव द्वारा की गई थी, और न ही सहायक लिपिक, श्री अजय कुमार सिंह द्वारा। इसके अतिरिक्त, गुरु प्रसाद का नाम कार्यालय अधीक्षक, श्री ज्वाला

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



प्रसाद द्वारा न तो काटा गया और न ही उसे श्री अजय कुमार सिंह के नाम से बदला गया, और न ही यह सहायक लिपिक, श्री अजय कुमार सिंह द्वारा किया गया था।

18. इन सभी तथ्यों और साक्ष्यों, तथा राधे श्याम केजरीवाल (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि पर विचार करने के बाद, पुनरीक्षणकर्ता, अजय कुमार सिंह के विरुद्ध आपराधिक मामले का मूल आधार ही बनता प्रतीत नहीं होता है। उसे विभागीय कार्यवाहियों में पूरी तरह से दोषमुक्त कर दिया गया है, और श्री ज्वाला प्रसाद को जिम्मेदार व्यक्ति पाया गया है।

19. हेमेंद्र एम. कोठारी (उपरोक्त) में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब, न्यायनिर्णयन प्राधिकारी के समक्ष विभागीय कार्यवाहियों में, विभाग आरोपों को स्थापित नहीं कर सका, तो यह कल्पना करना कठिन है कि विभाग आपराधिक न्यायालय के समक्ष उन्हीं आरोपों को कैसे साबित कर सकता है, विशेष रूप से तब जब आपराधिक कार्यवाहियों में आवश्यक प्रमाण का मानक विभागीय कार्यवाहियों की तुलना में बहुत अधिक और अधिक कठोर है।

20. सुनील गुलाटी (उपरोक्त) में प्रतिपादित विधि के दृष्टिगत, जहां विभागीय कार्यवाहियों में दोषमुक्ति गुण-दोष के आधार पर है और संबंधित व्यक्ति को निर्दोष पाया जाता है, और आपराधिक अभियोजन तथ्यों और परिस्थितियों के एक ही समूह पर आधारित है, तो आपराधिक अभियोजन को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। राधे श्याम केजरीवाल (उपरोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इन दोनों विचारों का विधिवत समर्थन किया गया है।

21. पुनरीक्षणकर्ता, अजय कुमार सिंह को, न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों में गुण-दोष के आधार पर विधिवत दोषमुक्त किए जाने और निर्दोष पाए जाने के बाद, तथ्यों और परिस्थितियों के समान समूह पर उसके विरुद्ध आपराधिक अभियोजन को जारी रखने की अनुमति देना न्यायोचित नहीं होगा।

22. पुनरीक्षणकर्ता/अजय कुमार सिंह के आपराधिक अभियोजन को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। अतः विद्वान विशेष मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, मेरठ द्वारा आपराधिक मामला संख्या 8550 वर्ष 2020 (राज्य बनाम सुरेंद्र सिंह और अन्य), जो मुकदमा अपराध संख्या 347 वर्ष 2017, धारा 417, 465, 468, 471 और 120बी भा.द.सं., पुलिस स्टेशन सदर बाजार, जिला

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



मेरठ से उत्पन्न हुआ है, मैं पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 20.7.2024 को एतद्वारा अपास्त किया जाता है और पुनरीक्षणकर्ता/अजय कुमार सिंह को एतद्वारा आरोपमुक्त किया जाता है।

23. परिणामस्वरूप, वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण ऊपर उल्लिखित कारणों से स्वीकार किया जाता है।

30 मार्च, 2026

एस.एफ.ए./

(न्यायमूर्ति अब्दुल शाहिद)

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”